प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय,बिलासपुर

द्वितीय अपील सं 215/2011

निर्णय सुरक्षित किया गया : 26.06.2025

निर्णय पारित किया गयाः09.09.2025

1. उत्कर्ष ओट्टलवार पिता श्री वी.सी. ओट्टलवार, उम्र लगभग 40 वर्ष, निवासी तिलक नगर, बिलासपुर, जिला–बिलासपुर, छत्तीसगढ़।

2. श्रीमती विजया ओट्टलवार (हटाया गया) माननीय न्यायालय के आदेश दिनांक 03–03–2021 के अनुसार विधिक प्रतिनिधि के द्वारा

2 (क) वैभव ओट्टलवार पिता स्वर्गीय वी. सी. ओट्टलवार, 45 वर्ष, निवासी अपोलो अस्पताल परिसर, लिंगियाडीह, राज किशोर नगर, बिलासपुर, जिलाबिलासपुर (छत्तीसगढ़)

---अपीलार्थी

बनाम

1. अशोक कुमार तिवारी पिता स्वर्गीय श्री ततुराम तिवारी, 50 वर्ष, निवासी विद्यानगर, बिलासपुर, जिला बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

2. छत्तीसगढ़ राज्य, कलेक्टर के द्वारा बिलासपुर, जिला–बिलासपुर, छत्तीसगढ़

--उत्तरवादी

---

अपीलार्थी हेतु :--श्री टी. के. झा, अधिवक्ता।

उत्तरवादी सं. 1 हेतु :--श्री वैभव ए. गोवर्धन, अधिवक्ता।

राज्य हेतु :--श्री कल्पेश रूपारेल, पैनल अधिवक्ता।

---

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

**माननीय श्री नरेंद्र कुमार व्यास , न्यायाधीश**

**(सी. ए. वी. निर्णय)**

1. यह वादी की सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के तहत द्वितीय अपील है, जो बिलासपुर (गरीबगढ़) जिले के 5 वें अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा सिविल अपील संख्या 21ए/2010 में दिनांक 24.03.2011 को पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध दायर की गई है। यह अपील बिलासपुर (गरीबगढ़) के द्वितीय श्रेणी के प्रथम सिविल न्यायाधीश द्वारा सिविल वाद संख्या 130–ए/2008 में दिनांक 30.07.2010 को पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध दायर की गई है, जिसके द्वारा वादी द्वारा स्वामित्व और घोषणा के लिए दायर वाद को खारिज कर दिया गया है।

2. पक्षकारों का विवरण सिविल वाद संख्या 130–ए/2008 में विचारण न्यायालय के समक्ष उनके विवरण के अनुसार दिया गया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. इस न्यायालय ने 01.07.2021 को निम्नलिखित महत्वपूर्ण विधि प्रश्न पर द्वितीय अपील स्वीकार की है:---

**"क्या दोनों विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा वादियों के पक्ष में किए गए हस्तांतरण को छत्तीसगढ़ भूमि राजस्व संहिता, 1959 की धारा 158(3) के तहत वर्जित मानते हुए, अभिलेख के विपरीत निर्णय दर्ज करके उचित ठहराया है?"**

4. अभिलेख से प्राप्त संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं:--

**(क) वादीगण ने 05.10.2005 को माननीय सिविल जज, श्रेणी-II** बिलासपुर **के समक्ष घोषणा एवं स्थायी निषेधाज्ञा हेतु एक वाद दायर किया है, जिसमें मुख्यतः यह तर्क दिया गया है कि वादीगण ने प्रतिवादी संख्या 1 से ग्राम मोहतराई, पटवारी हल्का संख्या 14, राजस्व निरीक्षक मंडल बिलासपुर, ब्लॉक बिल्हा, ग्राम पंचायत भरारी, तहसील एवं जिला बिलासपुर में स्थित खसरा संख्या 702/2 क्षेत्रफल 4.75 एकड़ भूमि (जिसे आगे "वाद संपत्ति" कहा गया है) को पंजीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से 24.09.1990 को खरीदा था और वे वाद संपत्ति पर कब्जे में हैं।**

**(ख) वादीगण का यह भी कहना है कि प्रतिवादी संख्या 1 पिछले एक वर्ष से वादीगण के स्वामित्व को नकार रहा है और उपद्रव कर रहा है, जिससे वादीगण को वाद संपत्ति पर शांतिपूर्ण कब्जा और उपभोग करने में बाधा आ रही है, जिसके कारण उन्हें वाद दायर करना पड़ा है।वादीगण का यह भी कहना है कि प्रतिवादी संख्या 1 ने वादीगण के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने से इनकार करके वाद संपत्ति के मूल्य में अत्यधिक वृद्धि होने के कारण वादीगण के कब्जे को अस्वीकार कर दिया है।वाद लंबित रहने के दौरान वादपत्र में संशोधन किया गया और यह तर्क दिया गया कि उप–विभागीय अधिकारी (राजस्व) को 04.09.1991 के अपने आदेश द्वारा**

**वादीगण के स्वामित्व को रद्द करने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है, जिनके नाम राजस्व अभिलेखों में दर्ज हैं। यह भी तर्क दिया गया है कि वाद संपत्ति उप–विभागीय अधिकारी के अधिकार क्षेत्र से 5 किलोमीटर से अधिक दूरी पर स्थित है, इसलिए उन्हें इस मामले की जांच करने का कोई अधिकार नहीं है, अतः उप–विभागीय अधिकारी द्वारा पारित आदेश अवैध है।**

5. प्रतिवादी संख्या 1 ने अपना लिखित बयान दाखिल कर आरोपों का खंडन किया है और मुख्यतः यह तर्क दिया है कि:

**(क) प्रतिवादी संख्या 1 वाद संपत्ति का मूल स्वामी है, जिसे नायब तहसीलदार द्वारा 24.04.1984 को राजस्व मामले संख्या 10–ए/79/83–84 में पट्टे पर दिया गया था। ऋण पुस्तिका भी प्रदान की गई थी। यह भी तर्क दिया गया है कि प्रतिवादी संख्या 1 24.09.1984 से वाद संपत्ति पर कब्जे में है और तत्कालीन राजस्व निरीक्षक ने भी राजस्व अभिलेखों में उसका नाम दर्ज किया है, इसलिए वह प्रतिकूल कब्जे के आधार पर डिक्री प्राप्त करने का हकदार है।उसने यह भी इनकार किया है कि वादी संख्या 1 उक्त संपत्ति पर कृषि कार्य कर रहा है।परंतु उसने स्वीकार किया है कि उसने दिनांक 24.09.1990 की पंजीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से वादी को वाद संपत्ति का कब्जा सौंप दिया था।**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

6. प्रतिवादी संख्या 2 ने लिखित बयान दाखिल कर वादी के स्वामित्व और कब्जे से इनकार किया है, मुख्य रूप से यह तर्क देते हुए कि वाद संपत्ति, जिसका खसरा संख्या 702/2 क्षेत्रफल 1.901 हेक्टेयर है, खसरा संख्या 702 क्षेत्रफल 8.64 एकड़ का हिस्सा है, जिसे निस्तार पत्रक में छोटे–बड़े झाड़ के जंगल और घास के मैदान के रूप में वर्णित किया गया है।यह भूमि अभिलेखों में चरागाह भूमि के रूप में और खसरा पंचशाला में भी वर्णित है तथा सरकार के स्वामित्व में है।प्रतिवादी क्रमांक 1 वादित संपत्ति पर कभी भी कब्जे में नहीं था। यह भी तर्क दिया गया है कि राजस्व संहिता की धारा 167–बी के तहत कार्यवाही में राजस्व मामले संख्या 145–बी/12–90–91 में उप–विभागीय अधिकारी ने दिनांक 09.07.1990 के ज्ञापन संख्या एफ/6/234/7 बी–89 के अनुसार दिनांक 04.09.1991 को आदेश पारित किया और राजस्व अभिलेखों में वादित संपत्ति को सरकार के नाम पर दर्ज किया गया है।यह भी तर्क दिया गया है कि विक्रय विलेख दिनांक 09.07.1990 के ज्ञापन जारी होने के बाद निष्पादित किया गया है, इसलिए विक्रय विलेख के आधार पर वादी को कोई अधिकार प्राप्त नहीं हुआ है, अतः वह उक्त संपत्ति के संबंध में घोषणा और कब्जे की डिक्री प्राप्त करने का हकदार नहीं है।

7. पक्षकारों के कथनों के आधार पर, विद्वान विचारण न्यायालय ने तीन विवाद्यक निर्धारित किए हैं, जो नीचे दिए गए हैं:---

**"1. क्या वादीगण ग्राम मोहतराई प.ह.नं. 14 स्थित ख.नं. 702/2 क्षेत्रफल 4.75 ए. भूमि के स्वामी एवं आधिपत्यधारी है?**

**2. क्या वादीयों के आधिपत्य पर प्रति० क्र० 1 ने दखलंदाजी करने से निषेधित किये जाने का आदेश दिया जाना उचित है?**

**3. सहायता एवं व्यय?"**

8. वादी ने अपने दावे को साबित करने के लिए विक्रय विलेख (एक्स पी /1) और रसीद (एक्स पी/2) प्रस्तुत की है।वादी क्रमांक 1 ने स्वयं को पीडब्लू–1 के रूप में पेश किया और मुख्य परीक्षा में उन्होंने वाद पत्र में दिए गए अपने रुख को दोहराया है।प्रतिवादी क्रमांक 2 ने उक्त साक्षी से विस्तृत प्रतिपरीक्षा की, जिसमें उन्होंने स्वीकार किया कि उन्होंने राजस्व अभिलेखों में विक्रेता अशोक कुमार तिवारी का नाम दर्ज होने का कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है।उन्होंने यह भी कहा कि वे यह नहीं बता सकते कि विक्रेता अशोक कुमार तिवारी ने वाद संपत्ति कैसे प्राप्त की।उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि विक्रय विलेख निष्पादित करने से पहले उन्होंने यह पता नहीं लगाया था कि विक्रेता अशोक कुमार तिवारी ने वाद संपत्ति सरकार से पट्टे पर प्राप्त की है और उन्होंने दिनांक 04.09.1991 का आदेश प्रस्तुत नहीं किया है।उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि उन्होंने वाद में या किसी उच्च न्यायालय के समक्ष दिनांक 04.09.1991 के आदेश को शून्य और अमान्य घोषित करने की प्रार्थना नहीं की है।उन्होंने स्वीकार किया है कि मूल खसरा संख्या 702, क्षेत्रफल 8.64 एकड़, निस्तार पत्रक में चरागाह भूमि के रूप में दर्ज है।उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि उन्होंने वाद संपत्ति पर अपने कब्जे को साबित करने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है। वादी के समर्थन में प्रतिपरीक्षा में उपस्थित दूसरे साक्षी गणेश प्रसाद शास्त्री (पीडब्लू–2) ने स्वीकार किया है कि प्रतिवादियों ने उनकी उपस्थिति में वादियों को कोई भौतिक कब्जा नहीं दिया था। उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि शपथ पत्र के खंड 2 में उन्होंने गलत तथ्य दर्ज किए हैं।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. प्रतिवादी संख्या 2 ने दस्तावेज आदिकार पंजी (प्र डी/1) राजस्व अभिलेख (प्र डी/2) तथा खसरा पंचशाला (प्र डी/3 तथा डी/4) का प्रदर्शन किया।प्रतिवादी क्रमांक 1 के साक्षी जे.के. तिवारी, जो उस समय राजस्व अधिकारी थे, ने विचारण न्यायालय के समक्ष बयान दिया गया , जिसमें उन्होंने कहा कि आक्षेपित संपत्ति छोटे–बड़े झाड़ के जंगल का हिस्सा है और निस्तार पत्रक में उन्होंने कहा कि आक्षेपित संपत्ति को घास के मैदान के रूप में दर्ज किया गया है और इसे कभी भी निस्तार पत्रक से अलग नहीं किया गया था।साक्षी ने प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया कि आक्षेपित भूमि अशोक कुमार तिवारी को प्रदर्श डी/4 के माध्यम से पट्टे पर दी गई थी और उनका नाम दर्ज किया गया था। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि अशोक कुमार तिवारी को दी गई भूमि, जिसका खसरा क्रमांक 702/2 है, मूल खसरा क्रमांक 702 का हिस्सा थी। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि गिरदावली हर साल की जाती है और गिरदावली के अनुसार राजस्व अभिलेखों में प्रविष्टि की जाती है और यह भी स्वीकार किया कि कब्जे के आधार पर सरकार पट्टा दे सकती है।

10. प्रतिवादी सं 1 की स्वयं जांच नहीं की गई और उसके खिलाफ 11.09.2008 को एकतरफा कार्यवाही की गई तथा एकतरफा कार्यवाही को रद्द करने के लिए कोई आवेदन नहीं किया गया है।

11. विद्वान विचारण न्यायालय ने साक्ष्य और अभिलेखीय सामग्री का मूल्यांकन करने के बाद दिनांक 30.07.2010 के निर्णय एवं डिक्री द्वारा यह निष्कर्ष निकालते हुए वाद को खारिज कर दिया कि वाद संपत्ति अशोक कुमार तिवारी को 25.04.1984 को कलेक्टर की अनुमति के बिना धारा 165(7–बी) के उल्लंघन में पट्टे पर दी गई थी और पट्टा रद्द होने के बाद उन्होंने वाद संपत्ति बेच दी थी, अतः यह बिक्री कलेक्टर की अनुमति के बिना स्वामित्व के है, इसलिए वादी का वाद संपत्ति पर कोई स्वामित्व नहीं है क्योंकि वाद संपत्ति सरकार में विलय हो गई है।

12. इस निर्णय एवं डिक्री से असंतुष्ट होकर वादी ने विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपील दायर की है।प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपने दिनांक 24.03.2011 के निर्णय और आदेश के माध्यम से अपील को खारिज कर दिया है।प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपील खारिज करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलकर्ता द्वारा पट्टा रद्द करने से पहले उन्हें कोई सूचना नहीं दी गई थी, इसलिए पट्टा रद्द करना अवैध है। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने इस तर्क को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि अपीलकर्ता द्वारा रद्द करने के आदेश को चुनौती नहीं दी गई है, इसलिए यह अंतिम हो चुका है और तदनुसार, अपील खारिज कर दी गई है। इस निर्णय और डिक्री से असंतुष्ट होकर अपीलकर्ताओं ने इस न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील दायर की है।

13. इस न्यायालय ने उपरोक्त उल्लिखित विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न पर 01.07.2021 को इस द्वितीय अपील को स्वीकार कर लिया है।

14. वादी/अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दोनों निचली अदालतों द्वारा पारित निर्णय और डिक्री कानून के विरुद्ध हैं और उन्होंने यह भी निवेदन किया कि भूमि राजस्व संहिता की धारा 158(3) और धारा 165(7)–1–बी में किए गए संशोधन को पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जा सकता है और 24.09.1990 को निष्पादित स्वामी अधिकार और विक्रय विलेख को संशोधित प्रावधानों को पूर्वव्यापी रूप से लागू करके अपास्त नहीं किया जा सकता है।अतः उन्होंने अपील को स्वीकार करने का अनुरोध किया है।अपने तर्क को **पुष्ट करने के लिए उन्होंने श्री शंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय और अन्य बनाम डॉ. मनु**और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का हवाला दिया है, जो ए. आई. आर. 2023 एस. सी में प्रकाशित हुआ है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कंडिका 8.1 से 8.3 में निम्नलिखित कहा है:

**" 8.1 .यह सर्वविदित है कि कोई भी विधान या दस्तावेज, जो विधि के समान बल रखता है और जिसका स्वरूप और उद्देश्य स्पष्टीकरण या व्याख्यात्मक है तथा जो किसी क़ानून में संदेह दूर करने या किसी स्पष्ट चूक को सुधारने का प्रयास करता है, सामान्यतः पूर्वव्यापी रूप से लागू होगा, देखें रमेश प्रसाद वर्मा:(एआईआर 2017 एससी 734)।इसलिए, यह निर्धारित करने के लिए कि क्या 29 मार्च, 2001 के सरकारी आदेश को पूर्वव्यापी रूप से लागू किया जा सकता है, यह विचार करना आवश्यक है कि उक्त आदेश स्पष्टीकरण था या मौलिक संशोधन।**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

8.2.29 मार्च, 2001 के सरकारी आदेश के पूर्वव्यापी प्रभाव के पहलू से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए, न्यायमूर्ति जी.पी. सिंह द्वारा लिखित ग्रंथ, 'प्रिंसिपल्स ऑफ स्टैच्यूटरी इंटरप्रिटेशन', 11वां संस्करण (2008) से स्पष्टीकरण/घोषणा/व्याख्यात्मक प्रावधान के दायरे पर निम्नलिखित उद्धरण का संदर्भ लेना उपयोगी हो सकता है:

"घोषणात्मक कानूनों पर पूर्वव्यापी प्रभाव के विरुद्ध अनुमान लागू नहीं होता है।"जैसा कि क्रेज़ मामले में कहा गया है और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदित है:आधुनिक संदर्भ में, एक घोषणात्मक अधिनियम को सामान्य कानून, या किसी विधि के अर्थ या प्रभाव के संबंध में मौजूद संदेहों को दूर करने वाले अधिनियम के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।ऐसे अधिनियमों को आमतौर पर पूर्वव्यापी माना जाता है। [...] एक व्याख्यात्मक अधिनियम सामान्यतः किसी स्पष्ट चूक को दूर करने या पिछले अधिनियम के अर्थ के संबंध में संदेहों को स्पष्ट करने के लिए पारित किया जाता है। यह सर्वविदित है कि यदि कोई क़ानून उपचारात्मक है या केवल पिछले कानून की घोषणा करता है, तो आमतौर पर पूर्वव्यापी प्रभाव का आशय होता है।'हमेशा से यही अर्थ माना जाएगा' या 'कभी भी इसमें शामिल नहीं माना जाएगा' जैसे वाक्यांश घोषणात्मक हैं और स्पष्ट रूप से पूर्वव्यापी हैं।संशोधन अधिनियम के घोषणात्मक होने का स्पष्ट संकेत न होने पर, इसे घोषणात्मक नहीं माना जाएगा, खासकर तब जब संशोधित प्रावधान स्पष्ट और असंदिग्ध हो। संशोधन अधिनियम केवल स्पष्टीकरण के लिए भी हो सकता है, ताकि मूल अधिनियम के किसी ऐसे प्रावधान का अर्थ स्पष्ट किया जा सके जो पहले से ही निहित था।इस प्रकार के स्पष्टीकरणात्मक संशोधन का प्रभाव पूर्वव्यापी होगा, इसलिए यदि मूल अधिनियम संविधान के लागू होने के समय विद्यमान कानून था, तो संशोधन अधिनियम भी विद्यमान कानून का हिस्सा होगा।"[जोर दिया गया ]

8.3 इस न्यायालय ने कमिश्नर ऑफ इनकम टैक्स, बॉम्बे बनाम पोदार सीमेंट प्राइवेट लिमिटेड, (1997) 226 आईटीआर 625 (एससी) में यह उल्लेख किया कि संशोधन या परिवर्तन को लागू करने की परिस्थितियों और उसके परिणामों को ध्यान में रखना होगा, यह तय करते समय कि संशोधन प्रकृति में स्पष्टीकरणात्मक था या सारगर्भित और क्या इसका पूर्वव्यापी प्रभाव होगा या नहीं।"

15. उन्होंने मध्य प्रदेश राज्य बनाम मामले में मध्य प्रदेश की माननीय युगल पीठ के निर्णय का भी उल्लेख किया है।आधुनिक गृह निर्माण सहकारी समिति के मामले में, एमपीएलआरसी की धारा 158(3) के प्रावधानों पर विचार किया गया है और कंडिका 39 का उल्लेख किया जाएगा, जो इस प्रकार है:

"39. इस प्रकार, धारा के प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि यह भूमिस्वामी द्वारा अर्जित निहित अधिकारों को छीन लेती है और भूमि की विक्रय के मामले में कलेक्टर से पूर्व अनुमति लेने के संबंध में एक नया दायित्व या कर्तव्य निर्धारित करती है, इसलिए, धारा को पूर्वव्यापी प्रभाव वाला नहीं माना जा सकता है।भूमिस्वामी अधिकार, जो मूल पट्टाधारकों, अर्थात् मुख्तियार सिंह, विजय सिंह, साहिब सिंह को दिए गए थे, 1980 से पहले के थे और उपरोक्त संहिता के प्रावधानों द्वारा छीने नहीं जा सकते है।भूमिस्वामी को भूमि बेचने का निहित अधिकार था और उनके अधिकार 1959 की संहिता की धारा 165 (7–ख) के लागू होने से अप्रभावित और अप्रतिबंधित हैं।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

**यही स्थिति एमपीएलआरसी की धारा 158 (3) के साथ भी है क्योंकि इसे 28.10.1992 के संशोधन के माध्यम से लागू किया गया था, जो इस न्यायालय के अनुसार माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कथनों का उचित और तर्कसंगत कार्यान्वयन है। साथ ही साथ वैधानिक व्याख्या के सिद्धांत भी।"**

16. दूसरी ओर, इस तर्क का विरोध करते हुए विद्वान राज्य अधिवक्ता ने तर्क दिया कि दोनों विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री न्यायसंगत हैं, क्योंकि उप–विभागीय अधिकारी द्वारा पारित आदेश किसी भी न्यायालय में चुनौती का विषय नहीं है, अतः यह अंतिम हो चुका है। इसलिए, विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री वैध और न्यायसंगत हैं, और उन्होंने अपील को खारिज करने की प्रार्थना की।

17. मैंने दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं की बात सुनी और दोनों विचारण न्यायालय के अभिलेखों का अत्यंत सावधानीपूर्वक अध्ययन किया।

18. विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न को समझने के लिए, इस न्यायालय के लिए भूमि राजस्व संहिता, 1959 की धारा 158 और धारा 165 (7–बी) में संशोधन के उद्देश्यों और कारणों के विवरण को देखना उचित है।यह स्पष्ट है कि राज्य सरकारों द्वारा भूमि आवंटित किए गए व्यक्तियों के बीच विसंगति को दूर करने के लिए, ऐसे व्यक्तियों को हमेशा पट्टेदार माना जाता था, लेकिन इस विसंगति को दूर करने के लिए कलेक्टर या आवंटन अधिकारी जैसे व्यक्तियों को भूमिस्वामी अधिकार प्रदान करने का प्रस्ताव रखा गया, इस शर्त के साथ कि ऐसे व्यक्ति पट्टे या आवंटन की दिनांक से 10 वर्षों की अवधि के भीतर ऐसी भूमि को हस्तांतरित करने के हकदार नहीं होंगे, तदनुसार संशोधन किया गया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

19. अपील में उठाए गए विवाद्यक को बेहतर ढंग से समझने के लिए, इस न्यायालय के लिए भूमि राजस्व संहिता, 1959 की धारा 158(3) और 165(7–बी) को उद्धृत करना उचित है, जो इस प्रकार है:

**धारा 158:भूमिस्वामी (3) प्रत्येक व्यक्ति –**

(3) प्रत्येक व्यक्ति–

(i) जो छत्तीसगढ़ भूमि राजस्व संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1992 के प्रारंभ होने से पहले या उस तिथि को राज्य सरकार या कलेक्टर या आवंटन अधिकारी द्वारा उसे दी गई पट्टा के आधार पर भूमिस्वामी अधिकार से भूमि धारण करता है, ऐसे प्रारंभ होने की तिथि से, और

(ii) जिसे छत्तीसगढ़ भूमि राजस्व संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1992 के प्रारंभ होने के बाद राज्य सरकार या कलेक्टर या आवंटन अधिकारी द्वारा भूमिस्वामी अधिकार से भूमि आवंटित की जाती है, ऐसे आवंटन की तिथि से, ऐसी भूमि के संबंध में भूमिस्वामी माना जाएगा और इस संहिता द्वारा या इसके अंतर्गत भूमिस्वामी को प्रदत्त और आरोपित सभी अधिकारों और दायित्वों के अधीन होगा।परंतु कि ऐसा कोई भी व्यक्ति पट्टे या आवंटन दिनांक से दस वर्ष की अवधि के भीतर ऐसी भूमि का हस्तांतरण नहीं करेगा।

**स्पष्टीकरण:**

इस खंड में, "शासक" और "भारतीय राज्य" शब्दों का वही अर्थ होगा जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 366 द्वारा क्रमशः खंड (22) और (15) में इन शब्दों को दिया गया है।

**धारा 165 स्थानांतरण के अधिकार**

(7–बी):उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, कोई व्यक्ति जो राज्य सरकार से भूमि धारण करता है या कोई व्यक्ति जो धारा 158 की उपधारा (3) के तहत भूमिस्वामी अधिकारों में भूमि धारण करता है या जिसे राज्य सरकार या कलेक्टर द्वारा सरकारी पट्टेदार के रूप में भूमि पर कब्जा करने का अधिकार दिया गया है और जो बाद में ऐसी भूमि का भूमिस्वामी बन जाता है, वह कलेक्टर से कम रैंक के राजस्व अधिकारी की लिखित अनुमति के बिना ऐसी भूमि का हस्तांतरण नहीं करेगा, जिसके कारण लिखित रूप में दर्ज किए जाएंगे

20. धारा 158(3) के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि जो व्यक्ति मध्य प्रदेश भूमि राजस्व संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1992 के प्रारंभ होने से पहले या उस तिथि को राज्य सरकार या कलेक्टर/आवंटन अधिकारी द्वारा प्रदत्त पट्टे के आधार पर भूमिस्वामी अधिकार से भूमि धारण करता है और जिसे भूमि आवंटित की जाती है, उसे ऐसी भूमि के आवंटन की तिथि से भूमिस्वामी अधिकार प्राप्त होगा और वह भूमिस्वामी को प्रदत्त और लगाए गए सभी अधिकारों और दायित्वों के अधीन होगा।संशोधन में आगे यह प्रावधान किया गया है कि पट्टे या आवंटन की तिथि से 10 वर्ष की अवधि के भीतर कोई भी व्यक्ति ऐसी भूमि का हस्तांतरण नहीं करेगा। इसी प्रकार धारा 165(7–ख) में संशोधन किया गया है और राज्य सरकार से भूमि धारण करने वाला व्यक्ति या धारा 158 के (3) के अंतर्गत भूमिस्वामी अधिकार से भूमि धारण करने वाला व्यक्ति, जो बाद में ऐसी भूमि का भूमिस्वामी बन जाता है, कलेक्टर की अनुमति के बिना ऐसी भूमि का हस्तांतरण नहीं करेगा। इसका अर्थ यह है कि राज्य सरकार द्वारा दिए गए पट्टे के आधार पर पट्टेदार के रूप में भूमि धारण करने वाले व्यक्ति को संशोधन अधिनियम, 1992 के प्रारंभ होने से पहले या उस तिथि को भूमिस्वामी अधिकार प्रदान किए गए हैं।अतः, प्रतिवादी क्रमांक 1 को 24.04.1984 को राज्य सरकार द्वारा पट्टा दिए जाने की तिथि से, संशोधन अधिनियम, 1992 के तहत, पट्टे पर आवंटित संपत्ति का भूमिस्वामी घोषित किया जाएगा। चूंकि राज्य सरकार द्वारा उन्हें 24.04.1984 को पट्टा दिया गया है और 1984 से ही उन्हें भूमिस्वामी का अधिकार प्राप्त हो जाएगा, इसलिए कलेक्टर की अनुमति के बिना या पट्टा या आवंटन की तिथि से 10 वर्षों की अवधि के भीतर वे वाद संपत्ति का हस्तांतरण नहीं कर सकते हैं।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

21. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत यह तर्क कि वर्ष 1992 में भूमि राजस्व संहिता में किए गए संशोधन को पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं दिया जा सकता, यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए तो राज्य सरकार द्वारा पट्टा प्राप्त प्रतिवादी संख्या 1 को भूमि राजस्व संहिता की धारा 158 के प्रावधानों के अंतर्गत भूमिस्वामी अधिकार प्राप्त नहीं होगा और वह केवल पट्टेदार ही रहेगा तथा पट्टेदार वाद संपत्ति का हस्तांतरण नहीं कर सकता है.इस प्रकार, कलेक्टर द्वारा दिनांक 04.09.1991 के आदेश द्वारा निरस्त की गई विक्रय विलेख को त्रुटिपूर्ण नहीं माना जा सकता है।

22. प्रतिवादी संख्या 1 ने स्वयं को भूमिस्वामी बताते हुए वादित संपत्ति वादी को हस्तांतरित कर दी है, जबकि भूमि राजस्व संहिता, 1992 के संशोधन के तहत ही उसे भूमिस्वामी का दर्जा प्राप्त हुआ है। इसलिए, वादी प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर स्वामित्व का दावा नहीं कर सकता है, क्योंकि प्रतिवादी संख्या 1 के पास भूमि राजस्व संहिता में किए गए संशोधन पर आंशिक रूप से भरोसा करने और उक्त संशोधन द्वारा लगाए गए अन्य प्रतिबंधों को अस्वीकार करने का कोई अधिकार नहीं है।या तो संशोधन को पूर्णतः स्वीकार किया जाए या उसे पूर्णतः अस्वीकार किया जाए।वादी अपने हित में उचित प्रावधानों को स्वीकार नहीं कर सकता है और उन प्रावधानों को अस्वीकार नहीं कर सकता जो उसके हित में नहीं हैं।

23. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन कि संशोधन को पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं दिया जा सकता, भ्रामक है और मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की माननीय खंडपीठ द्वारा मुलायमसिंह और अन्य बनाम बुआधवा चमार और अन्य के मामले में दिए गए निर्णय के आलोक में अस्वीकृत किए जाने योग्य है, जो 2002 (2) एमपीएलजे 480 में प्रकाशित हुआ है, जिसमें भूमि राजस्व संहिता में किए गए संशोधन के प्रभाव पर विचार किया गया है तथा कंडिका 6 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया हैः

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

**6. ...यह प्रावधान 28.10.1992 को अधिनियमित किया गया था, जो इस मामले में विक्रय के लेन–देन के काफी बाद का समय है।यद्यपि इसमें यह प्रावधान है कि दस वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद भूमि का हस्तांतरण किया जा सकता है, लेकिन यह संहिता की धारा 165(7–बी) के निषेध के अधीन भी है। इसलिए जब तक कलेक्टर द्वारा ठोस कारणों के साथ ऐसी अनुमति नहीं दी जाती है, तब तक विक्रय अनुमेय नहीं है।उपरोक्त अधिनियम राज्य सरकार द्वारा भूमिहीन व्यक्ति को पट्टे पर दी गई भूमि के हस्तांतरण को प्रतिबंधित करने के लिए बनाया गया है और ऐसे व्यक्ति को संहिता की धारा 165(7–बी) के तहत अनुमत हस्तांतरण के अलावा किसी भी हस्तांतरण द्वारा भूमि से वंचित नहीं किया जा सकता है और कलेक्टर को ऐसी प्रार्थना पर विचार करने का अधिकार केवल दस वर्ष की अवधि के बाद ही दिया गया है, उससे पहले नहीं।"**

24. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा मध्य प्रदेश राज्य (उपरोक्त) मामले में दिए गए निर्णय हेतु उल्लेख किया है, जिसमें मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा मुलायम सिंह (उपरोक्त) मामले में दिए गए फैसले का उल्लेख नहीं किया गया है, इसलिए अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट निर्णय मामले के वर्तमान तथ्यों पर लागू नहीं होता है। जहां तक अपीलकर्ता के अधिवक्ता द्वारा श्री शंकराचार्य (उपरोक्त) मामले में संदर्भित निर्णय का संबंध है, विधिक स्थिति विवादित नहीं है, लेकिन माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह भी स्पष्ट रूप से स्थापित किया गया है कि क़ानून में संशोधन के पूर्वव्यापी प्रभाव पर विचार करते समय, कुछ मापदंडों पर विचार किया जाना चाहिए।माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने हितेंद्र विष्णु ठाकुर बनाम महाराष्ट्र राज्य [(1994) 4 एससीसी 602] के मामले में कंडिका 26 और 27 में संशोधन को पूर्वव्यापी रूप से लागू करने के मापदंडों पर निम्नलिखित रूप से विचार किया है:–––

"26. नामित न्यायालय ने माना है कि संशोधन पूर्वव्यापी रूप से लागू होगा और उन लंबित मामलों पर लागू होगा जिनमें संशोधन अधिनियम के लागू होने की दिनांक को जांच पूरी नहीं हुई थी और तब तक अदालत में चालान दाखिल नहीं किया गया था।इस न्यायालय द्वारा विभिन्न मामलों में स्थापित कानून से, संशोधन अधिनियम के दायरे और उसके पूर्वव्यापी प्रभाव के संबंध में उभरने वाले कुछ उदाहरण स्वरूप सिद्धांत, यद्यपि संपूर्ण नहीं हैं, निम्नलिखित हैं:

(i) कोई भी कानून जो मौलिक अधिकारों को प्रभावित करता है, उसे भविष्य में लागू होने वाला माना जाता है, जब तक कि उसे स्पष्ट रूप से या आवश्यक आशय से पूर्वव्यापी न बना दिया जाए। वहीं, कोई भी कानून जो केवल प्रक्रिया को प्रभावित करता है, जब तक कि शाब्दिक रूप से ऐसा अर्थ निकालना असंभव न हो, उसे पूर्वव्यापी माना जाता है। ऐसे कानून को व्यापक अर्थ नहीं दिया जाना चाहिए और उसे उसकी स्पष्ट रूप से परिभाषित सीमाओं तक ही सीमित रखा जाना चाहिए।

(ii) मंच और परिसीमा से संबंधित कानून प्रक्रियात्मक प्रकृति का है, जबकि वाद–विवाद और अपील के अधिकार से संबंधित कानून, यद्यपि उपचारात्मक है, सारगत प्रकृति का है।

(iii) प्रत्येक वादी को सारगत कानून में निहित अधिकार प्राप्त है, परन्तु प्रक्रियात्मक कानून में ऐसा कोई अधिकार नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(iv) सामान्यतः, प्रक्रियात्मक कानून को पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जाना चाहिए, जहाँ इसका परिणाम पहले से संपन्न लेन–देन के संबंध में नई अक्षमताएँ या दायित्व उत्पन्न करना या नए कर्तव्य थोपना हो।

(v) ऐसा कोई क़ानून जो न केवल प्रक्रिया में परिवर्तन करता है बल्कि नए अधिकार और दायित्व भी सृजित करता है, भविष्य में लागू होने वाला माना जाएगा, जब तक कि स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा अन्यथा प्रावधान न किया गया हो।

27. विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री तुलसी के प्रति निष्पक्षता बरतते हुए यह कहा जा सकता है कि उन्होंने (अपने मौखिक और लिखित तर्कों दोनों में) इस कानूनी स्थिति का खंडन नहीं किया कि अनिवार्य हिरासत की अवधि और जमानत देने की प्रक्रिया को विनियमित करने वाला संशोधन अधिनियम 43, 1993, प्रक्रियात्मक प्रकृति का होने के कारण, पूर्वव्यापी रूप से लागू होगा।अतः हमें संशोधन अधिनियम के पूर्वव्यापी प्रभाव के प्रश्न की आगे जांच करने की आवश्यकता नहीं है। पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत दलीलों के आधार पर, हम नामित न्यायालय के उस निष्कर्ष को बरकरार रखते हैं, जिसके कारण न्यायालय ने दर्ज किए हैं और जिनका उल्लेख हमने ऊपर किया है, कि 1993 का संशोधन उन मामलों पर लागू होगा जो 22–5–1993 को जांच के लिए लंबित थे और जिनमें तब तक न्यायालय में चालान दाखिल नहीं किया गया था।"

25. माननीय सर्वोच्च न्यायालय **ने राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ बनाम भारत संघ और अन्य [(2003) 5 एससीसी 23] के मामले में कंडिका 15 और 16 में इस प्रकार कहा है:---**

**"15. विधायी शक्ति, चाहे वह पहली बार अधिनियम प्रस्तुत करने की हो या अधिनियमित कानून में पूर्वव्यापी प्रभाव से संशोधन करने की, न केवल सक्षमता के प्रश्न के अधीन है, बल्कि कई न्यायिक रूप से मान्यता प्राप्त सीमाओं के भी अधीन है, जिनमें से कुछ पर हम वर्तमान में विचार कर रहे हैं।पहली शर्त यह है कि प्रयुक्त शब्दों में स्पष्ट रूप से पूर्वव्यापी प्रभाव का उल्लेख होना चाहिए या इसका स्पष्ट संकेत होना चाहिए।दूसरी शर्त यह है कि पूर्वव्यापी प्रभाव उचित होना चाहिए और अत्यधिक या कठोर नहीं होना चाहिए, अन्यथा इसे असंवैधानिक घोषित किए जाने का खतरा रहता है।तीसरी शर्त तब लागू होती है जब किसी न्यायिक निर्णय को निरस्त करने के लिए कानून पेश किया जाता है।यहां, निर्णय के वैधानिक आधार को हटाए बिना, निर्णय को पलटने के लिए शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।**

**16. किसी अधिनियम को पूर्वव्यापी प्रभाव देने के विधायी इरादे को व्यक्त करने का कोई निश्चित सूत्र नहीं है। कभी-कभी यह उस स्थिति में क्षेत्राधिकार प्रदान करके किया जाता है जहां पहले उचित रूप से क्षेत्राधिकार स्थापित नहीं किया गया था।कभी-कभी यह किसी वैध और कानूनी कराधान प्रावधान को पूर्वव्यापी रूप से पुनः अधिनियमित करके और फिर काल्पनिक रूप से पहले से एकत्र किए गए कर को पुनः अधिनियमित कानून के तहत मान्य बनाकर किया जाता है।कभी-कभी विधानमंडल कर वसूली के कानून का अपना अर्थ और व्याख्या देता है और विधायी आदेश द्वारा उस नए अर्थ को न्यायालयों पर बाध्यकारी बना देता है। विधानमंडल इनमें से किसी एक विधि या सभी विधियों का अनुसरण कर सकता है।"**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

26. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विजय बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य [(2006) 6 एससीसी 289] मामले में कंडिका 10 से 12 में निम्नलिखित निर्णय दिया है:

- "10. यह सत्य हो सकता है कि संशोधन 8.8.2003 को लागू हुआ। उपरोक्त प्रावधान से उत्पन्न विधायी नीति, हमारी राय में, बिल्कुल स्पष्ट और असंदिग्ध है। उक्त प्रावधान को लागू करके, विधायिका का अन्य उद्देश्यों के साथ यह इरादा था कि जमीनी स्तर पर लोकतंत्र लाने के उद्देश्य से, किसी व्यक्ति को संविधान (73 वां संशोधन) अधिनियम के तहत सृजित दो पदों पर रहने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। यह सत्य है कि सामान्यतः किसी कानून को भावी प्रभाव वाला माना जाता है, परन्तु यही नियम अयोग्यता संबंधी प्रावधान पर लागू नहीं होता है। पूर्वव्यापी व्याख्या के विरुद्ध निषेध कोई कठोर नियम नहीं है।यह नियम उपचारात्मक या स्पष्टीकरणात्मक कानून पर लागू नहीं होता।यदि कानून के अध्ययन से विधायिका का उद्देश्य स्पष्ट हो, तो न्यायालय उसे लागू करेगा।उक्त उद्देश्य के लिए, कानून का सामान्य दायरा सुसंगत है।

प्रत्येक कानून जो वर्तमान कानून के तहत निहित किसी अधिकार को छीनता है, वह पूर्वव्यापी प्रभाव वाला होता है।[देखें––भारत सरकार और अन्य बनाम भारतीय तंबाकू संघ, (2005) 7 एस. सी. सी. 396।]

मूल सिद्धांत यह है कि कानूनों की व्याख्या हमेशा भविष्योन्मुखी रूप से की जानी चाहिए, जब तक कि कानूनों की भाषा उन्हें स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा पूर्वव्यापी न बना दे।नए अपराधों को परिभाषित करने वाले दंडात्मक कानून हमेशा भविष्योन्मुखी होते हैं, लेकिन अक्षमताएं उत्पन्न करने वाले दंडात्मक कानून, हालांकि आमतौर पर भविष्योन्मुखी रूप से व्याख्या किए जाते हैं, कभी–कभी पूर्वव्यापी रूप से व्याख्या किए जाते हैं जब यह स्पष्ट आशय होता है कि उन्हें अतीत की घटनाओं पर लागू किया जाना है।दंड संहिता की इस प्रकार व्याख्या क्यों की जाती है, इसका कारण मुख्य न्यायाधीश एर्ले ने मिडलैंड रेलवे कंपनी बनाम पाई, (1861) 10 सी.बी. एनएस 179 पृष्ठ 191 पर निम्नलिखित शब्दों में बताया था:

"कानून का प्रशासन करने का दायित्व रखने वाले लोग संसद के किसी अधिनियम को पूर्वव्यापी प्रभाव देने से पूरी तरह से बचते हैं, जब तक कि विधायिका का ऐसा अर्थ निकालने का आशय स्पष्ट, सरल और असंदिग्ध भाषा में व्यक्त न किया गया हो; क्योंकि यह न्याय की भावना को स्पष्ट रूप से ठेस पहुंचाता है कि कोई अधिनियम, जो उस समय वैध था, किसी नए अधिनियम द्वारा अवैध बना दिया जाए।" इस सिद्धांत को अब हमारे संविधान द्वारा मान्यता दी गई है और इसे विधायी शक्ति पर संवैधानिक प्रतिबंध के रूप में स्थापित किया गया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

11. बाउशर पियरे आंद्रे बनाम अधीक्षक, केंद्रीय जेल, तिहाड़, नई दिल्ली और अन्य [(1975) 1 एससीसी 192] के मामले में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 428 के लाभकारी प्रावधानों की व्याख्या करते हुए, इस न्यायालय ने यह राय व्यक्त की:

**"इस धारा की भाषा के सीधे और स्वाभाविक अर्थ के अनुसार, इसकी प्रयोज्यता के लिए एक ऐसी स्थिति निर्धारित होती है जिसे "जहां किसी आरोपी व्यक्ति को दोषसिद्धि पर एक निश्चित अवधि के लिए कारावास की सजा सुनाई गई हो" खंड द्वारा वर्णित किया गया है।"इस खंड में ऐसा कुछ भी नहीं है जो स्पष्ट रूप से या निहितार्थतः यह दर्शाता हो कि दोषसिद्धि और सजा नई दंड प्रक्रिया संहिता के लागू होने के बाद ही होनी चाहिए।खंड की भाषा तटस्थ है।इसमें किसी विशेष समय का उल्लेख नहीं है जब आरोपी व्यक्ति को दोषी ठहराया जाना चाहिए था और दंड भुगता जा सकता है ।यह केवल एक ऐसी तथ्यात्मक स्थिति को इंगित करता है जो धारा की प्रयोज्यता को आकर्षित करने के लिए मौजूद होनी चाहिए, और यह तथ्यात्मक स्थिति समान रूप से संतुष्ट होगी चाहे किसी आरोपी व्यक्ति को नई दंड प्रक्रिया संहिता के लागू होने से पहले या बाद में दोषी ठहराया गया हो और दंड पारित किया गया है ।यदि किसी आरोपी व्यक्ति को नई दंड प्रक्रिया संहिता के लागू होने से पहले दोषी ठहराया गया हो, लेकिन उसके दंड अभी भी चल रही हो, तो यह कहना अनुचित नहीं होगा कि "आरोपी व्यक्ति को दोषसिद्धि पर एक निश्चित अवधि के लिए कारावास की दंड पारित किया गया है.अतः, यदि किसी अभियुक्त को दोषी ठहराया जा चुका है और वह दंड प्रक्रिया संहिता के नए अधिनियम**

**के लागू होने की तिथि तक अपना दंड भुगत रहा रहा है, तो धारा 428 लागू होगी और वह यह दावा करने का हकदार होगा कि मामले की अन्वेषण,जांच, या विचारण के दौरान उसके द्वारा बिताई गई अभिरक्षा की अवधि को उस पर लगाई गई कारावास की अवधि में से समायोजित किया जाए और उसे केवल शेष अवधि ही भुगतनी पड़े।**

**12. अपीलकर्ता का चुनाव एक क़ानून के प्रावधानों के अनुसार हुआ था।निर्वाचित होने का अधिकार एक क़ानून द्वारा सृजित किया गया था, और इसलिए, इसे एक क़ानून द्वारा ही छीना जा सकता है।यह अब सर्वविदित है कि जब पूर्वव्यापी प्रभाव देने वाले प्रावधान का शाब्दिक पाठ निरर्थकता या विसंगति उत्पन्न नहीं करता है, तो उसे केवल भावी प्रभाव वाला नहीं माना जाएगा।निषेध कोई कठोर नियम नहीं है और यह विधायिका के आशय और प्रयोजन के अनुसार भिन्न हो सकता है, लेकिन ऐसे मामले में इसे लागू करना निष्पक्षता का सिद्धांत है।जब कोई विधि पूरे समुदाय के लाभ के लिए बनाया जाता है, तो प्रावधान के अभाव में भी, उस कानून को पूर्वव्यापी माना जा सकता है।अपीलकर्ता इस संबंध में विधायिका की सक्षमता पर प्रश्न नहीं उठाता है और न ही उठा सकता है।"**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

27. उपर्युक्त विधिक स्थिति और राज्य सरकार द्वारा पट्टा दिए गए पट्टेदार को भूमिस्वामी अधिकार प्रदान करने वाले लाभकारी संशोधन पर विचार करते हुए, तथा उपर्युक्त संशोधित प्रावधान को ध्यानपूर्वक पढ़ने से राज्य सरकार का इरादा स्पष्ट होता है, क्योंकि यह संशोधन अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले या उस तिथि से लागू होता है, जिसे 28.10.1992 को प्रभावी किया गया था, जो स्पष्ट रूप से राज्य सरकार के पूर्वव्यापी प्रभाव देने के आशय को दर्शाता है, क्योंकि यह आम जनता के हित में है।संशोधित प्रावधान राज्य सरकार द्वारा भूमिहीन व्यक्ति को पट्टे पर दी गई भूमि के हस्तांतरण को भी प्रतिबंधित करता है और ऐसे व्यक्ति को संहिता की धारा 165(7–बी) के तहत अनुमत हस्तांतरण के अलावा किसी भी हस्तांतरण द्वारा भूमि से वंचित नहीं किया जा सकता है।अतः ,भूमि राजस्व संहिता की संशोधित धारा 158(3) और 165(7–बी) के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि विधायिका ने विवेकपूर्ण ढंग से ऐसा कानून बनाया है जो 28.10.1992 को या उससे पहले लागू हुआ था, इसलिए अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा यह तर्क कि संशोधन को पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं दिया जा सकता, भ्रामक है और अस्वीकार किए जाने योग्य है।

28. तदनुसार, विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न का उत्तर अपीलार्थी के विरुद्ध तथा उत्तरवादी के पक्ष में दिया जाता है।

29. परिणामस्वरूप, अपील खारिज की जाती है।तदनुसार एक डिक्री तैयार की जाए।

**सही/–**

**(नरेंद्र कुमार व्यास)**

**न्यायाधीश**

**(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)**

***अस्वीकरणः*** *हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयी एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु* ***निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।***

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur